हिन्दी ललित निबन्ध साहित्य के विकास में डॉ. रघुवीर सिंह

डॉ. आर.पी. वर्मा

असि. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
इन्दिरा गॉंधी राजकीय महिलामहाविधालय,
रायबरेली, उ.प्र

हिन्दी ललित निबन्ध जगत में रघूवीर सिंह का ठीक वही स्थान है जो हिन्दी नाटक और काव्य में प्रसाद का, उपन्यास और कहानी में प्रेमचन्द्र का तथा आलोचना और साहित्य के इतिहास में स्वयं डॉ. रघुवीर सिंह का निबन्ध समालोचना और साहित्येतिहास–तीन–तीन विधाओं में वे अपने उपमान आप हैं। कोई अन्य हिन्ह्री निबन्धकार या समालोचना या साहित्य में इतिहासकार उनके बराबर नहीं बैठाया जा सकता। विशेषकर "विचारात्मक निबन्धों की श्रेणी में एक भी ऐसा निबन्धकार नहीं हुआ, जिसे श्री सिंह के समक्ष माना जा सके। एक भी ऐसी निबन्ध कृति नहीं है, हिन्दी में जो 'ताज' के सामने रखी जा सके।"

(डॉ. प्रकाश द्विवेदी)

जहाँ तक ललित निबन्धों का प्रश्न है, हम डॉ. प्रकाश द्विवेदी के निम्न कथन से पूर्णतया सहमत हैं। "ललित नबिन्धों पर उन्होंने इतने जबरदस्त ढंग से निबन्ध लिखकर उसकी समस्त संभावनाओं को इस कदर निःशेष कर दिया है कि उनके बाद किसी भी लेखक ने इस विषय पर लेखनी उठाने का सहास नहीं दिखाया। उनके ये निबन्ध विचारात्मक निबन्धों के चरम आदर्श हैं।

अब देखने का प्रयास किया जाएगा कि डॉ. रघुवीर सिंह का हिन्दी ललित निबन्ध में क्या स्थान है? यह भी कहा जा चुका है कि ललित निबन्ध की परम्परा भी निबन्ध के अन्य वर्गो की परम्पराओं के साथ ही आविर्भूत हुई। भारतेन्दुकाल में भारतेन्दु के अतिरिक्त बालकृष्ण भट्ट, प्रताप नारायन मिश्र आदि ने भी भावात्मक–कोटि की निबन्ध–रचना की थी। परन्तु यदि सम्पूर्ण परम्परा को लिया जाएगा तो अध्यापक पूर्णसिंह, रायकृष्ण दास, आचार्य चतुरसेन शास्त्री, पं. माखनलाल चतुर्वेदी, श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी, श्री वियोगी हरि और डॉ. रघुवीर सिंह के निबन्ध अधिक महत्व के अधिकारी प्रतीत होते हैं। अध्यापक पूर्ण सिंह ने हिन्दी में सच्ची वीरता, मजदूरी और प्रेम, आचरण की सभ्यता और कन्यादान आदि कतिपय निबन्धों की रचना की। परन्तु उन्हें कुछ ही रचनाओं के बल पर एक सफल निबन्धकार और शैलीकार माना जाता है। उनके निबन्धों में स्वीधीन चिन्तन अनभिभूत विचार प्रकाशन, प्रभावशाली, कटिबद्ध, निश्चल, निर्मल अनुभूति, आकर्षक आत्मीयता और अनुराग सभी कुछ मिलेगा।

उनके निबन्धों की भावुकता के तल में आध्यात्मिकता की अन्तर्धारा प्रवाहित है। परन्तु उनकी आध्यात्मिकता–मार्मिकता संकीर्ण ने होकर उदार है। इनमें उनके निश्चल हृदय और विशाल व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति हुई है। मनुष्य अथवा प्रकृति जिस किसी से उन्होंने अपना सम्बन्ध स्थापित किया है। उसके वर्णन में उनका हृदय योग वैसा प्रतीत होता है। स्वाधीन–चिन्तन, निर्भय विचार–प्रकाश औश्र समय तथा परिस्थिति की मांग का अन्तर देने में उनके निर्णय अतुलनीय हैं। उनके निबन्धों में भाव–प्रवणता है, परन्तु वे विचारात्मकता के संस्पर्श में भी शून्य नहीं हैं। वस्तुतः उनके सभी निबंध गम्भीर विचार और मनन के पश्चात् लिखें गए हैं। भाषा–शैली की दृष्टि से भी उनके निबन्ध उत्कृष्ट हैं। उनकी

रचनाओं में कभी काव्यमय की मधुर–स्निग्ध–भावुकता भरी धारा उमड़ पड़ती है, कभी जोश और आवेग की तीव्र धारा वह निकली है। विषय, अवसर, वातावरण सबके अनुसार भाषा में स्वाभाविक विविध–रुपता आ जाती है।

रायकृष्ण दास ने 'साधना' और 'प्रवाल' में एक निराली गद्य–शैली का रुप उपस्थित किया। परोक्ष के प्रति मानव–अनुभूति को अभिव्यंजित करने के लिए एक कलापूर्ण अनुभूति को प्रणाली का यथोचित् विकास करने में उनका योगदान उल्लेखनीय है। शुद्ध भावात्मक निबंधों की कोटि में रखी जा सकने वाली इनकी रचनाएं अधिक नहीं हैं। परन्तु इनके गद्य–काव्य भावात्मक–निबन्ध के बहुत कुछ निकट पहुंचते प्रतीत हैं। इनकी कृति 'साधना' में प्रेम और श्रद्धा के हृदयहारी चित्र हैं और इनकी 'प्रवाल' पुस्तक में शिशु–भावना के विस्मय, उल्लास और जिज्ञासा को वाणी दी गई है।

माखनलाल चतुर्वेदी की रचनाओं में सबसे प्रमुख धारा राष्ट्रीय की रचनाओं में सबसे प्रमुख धारा राष्ट्रीयता की है। उनकी राष्ट्रीयता में उद्‌बोधन का स्वर है। चतुर्वेदी की देश की वर्तमान अघोषित स्थिति की ओर संकेत करते हुए उसे ऊपर उठने के लिए बलिदान की प्रेरणा देते हैं। उनके भावात्मक–निबन्धों में दूसरी धारा भक्ति की है। यह भी बलिदान और उत्सर्ग की भावना से युक्त है। आध्यात्मिक प्रेम इनके लिए सुख का कहीं, कबीर और जायसी की भांति सिर का सौदा है। तीसरे प्रकार के निबन्धों में उन्होंने साहित्य और कला को अपना वर्ण्य–विषय बनाया है। ये विषय विचारात्मक निबंधों के ही उपयुक्त समझे जाते हैं। इन पर भावात्मक–श्रेणी के निबंध लिखकर चतुर्वेदी जी ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। इनके अधिकांश निबंध प्रेम रंग में रंगे हैं। प्रेम ही इनके जीवन का सम्बल है, यात्रा का पाथेय है। त्याग और बलिदान इनके जीवन का आदर्श हैं। चतुर्वेदी जी के निबन्धों में कोरी भावुक्ता ओर काव्यात्मकता नहीं है, वरन् गम्भीर चिन्तन, सूक्ष्म–अध्ययन और गम्भीर–अनुभव भी प्रकट होता है। उनकी अभिव्यंजना में विलक्षण, दुर्लभ और मुग्धकारी व्यंजना है। जो सांकेतिकता और लाक्षणिकता इनकी शैली में मिलती है, वह अन्यत्र कम ही मिलती है, वह अन्यत्र कम ही दिखाई देती है।

वियोगी हरि के भावात्मक निबन्ध–संग्रह 'भावना', 'अन्तर्नाद' और 'तरंगिनी' हैं। इनके निबन्धों में राष्ट्रीयता और भक्ति–भावना का ही अंकन अधिक हुआ है। तरंगिनी में भक्ति–भावना अधिक प्रबल है, उसमें राष्ट्रीय–भावना यत्र–तत्र संकेत रुप में ही मिलती है। उनके निबन्धों में भावों की प्रचुरता भाषा की बोधगम्यता, सरसता और साहित्यिकता व्यापक रुप में मिलती है। प्रेम औश्र विरह, देानों पर दया, साहित्यिक चन्द्रमा आदि इनके लेख भाव–विहव्ल, रस प्लावित और हृदयहारी हैं। परन्तु यह भी स्वीकार करना होगा कि इनकी अधिकांश रचनाओं में निबंध का व्यक्तित्व पूरी तरह से विकसित नहीं हो सकता है।

आचार्य चतुरसेन शास्त्री के कतिपय निबन्धों में भावों का बिम्ब–ग्रहण करवाने का प्रयत्न हुआ है। ऐसी रचनाएं अन्तस्तल में मिलती हैं। राष्ट्रीय भावना की रचनाएं 'मेरी लाल की हाय' और 'तरलाग्नि' में संकलित हैं। इनकी कृतियों में आत्म–निष्ठा के वित्र पर्याप्त हैं। उनकी आत्मनिष्ठता पर वैयक्तिकता की गहरी छाप है। श्री शांतिप्रिय द्विवेदी के भावात्मक निबन्धों में आत्मीयता, ममता, निष्छल करुणा और मार्मिकता पाठक को एक नवीन भावलोक में ले जाकर खड़ा कर देती है। पथ–चिन्ह में इनके करुण–रस में जो भाव संकलित संस्मरणात्मक निबन्ध हैं। इनकी भाषा–शैली बड़ी मनोरम है, जिससे ये निबन्ध हृदय–ग्राही बन पड़े हैं।

उपर्युक्त सभी निबन्धकारों में विवेच्य लेखक का स्थान अलग और महत्वपूर्ण दिखायी

देता है। अधिकांश अन्य निबन्धकारों से इनका विषय–क्षेत्र अधिक विस्तृत है। डॉ0 प्रभाकर माचवे को उनका विषय–क्षेत्र परिमत प्रतीत हुआ है। वे कहते हैं कि विषयों की विविधता का भी अभाव है। उनका मनोलोक रुढ़–विषयों के प्रदक्षिणा–पथ पर ही मंडराता है। उनके मनोलोक में इतिहास का देवता प्रतिष्ठत है। विगत का इतना ध्यान हिन्दी के अन्य निबंधकार नक शायद ही रखा हो।

प्रस्तु अनुबन्ध अध्याय में देखा जा चुका है। कि डॉ. रघुवीर सिंह ने एतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक विषयों पर ही निबंध रचना नहीं की, उन्होंने जीवनोपयोगी विषयों का ` भी अपनी रचनाओं का विषय बनाया है। उनकी 'जीनव–धूलि' की रचनाएं भक्ति, प्रेम और सहस्य–भावना से भी संकलित हैं। अपने निबन्धों में उन्होंने ऐसी अनेक सूक्तियों का समावेश भी किया है, जो सब मिलकर मानव की जीवन–यात्रा की सम्बल भी बन जाती हैं।

अतीत को लेकर डॉ. रघुवीर सिंह ने अत्यन्त सुन्दर भाव–भरे रंगीन चित्र उतारे है। यह वस्तुतः उनका दोष नहीं अपितु उनका देन है। 'अतीत' को वर्ण्य–विषय बनाने के लिए जहां प्रसाद दोषी नहीं हैं, वृन्दावनलाल वर्मा अपराधी नहीं हैं, वहाँ डॉ. रघुवीर सिंह के प्रति ही यह आक्रोश क्यों? वस्तुतः नाटक के क्षेत्र में जो कार्य प्रसाद ने किया। उपन्यास के क्षेत्र में वर्मा जी द्वारा जो कार्य सम्पन्न हुआ, उसे ही हमारे विवेच्य लेखन ने निबन्ध के क्षेत्र में कर दिखाया। इससे वे हिन्दी के महान् लेखकों की कोटि में आते हैं।

अतीत में रुची किसी लेखक का महत्व कम नहीं करती, उसे बढ़ाती ही है। अतीत में ही मानवता की सच्ची तस्वीर दिखाई पढ़ती है। आचार्य शुक्ल के शब्दों में–" हृदय के अतीत एक मुक्ति–लोक है जहां वह अनेक प्रकार के बन्धनों से छूटा रहता है और अपने शुद्ध रुप में विचरता है। वर्तमान हमें अंधा बनाये रहता है, अतीत बीच–बीच में हमारी आँखें खोलता रहता है। में तो समझता हूँ कि जीवन का नित्य स्वरुप दिखाने वाला दर्पण मनुष्य के पीछे रहता हैं, आगे तो बराबर खिसकता हुआ दुर्भेद पर्दा रहता है।"

वास्तव में भावात्मक निबन्ध की परम्परा में ऐतिहासिकता की प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करने वाले डॉ. रघुवीर सिंह एक–मात्र लेखक हैं। उन्होंने अतीत–काल को अपनी रंगीन भाषा–शैली और गतिशील कल्पना के आधार पर जीता–जागता 3प प्रदान किया है। इतिहास के अस्थि–पंजर में रक्त–मांस का संचार कर उन्होंने जो सजीवता उसे प्रदान की है, वह हिन्दी साहित्य की गौरवपूर्ण उपलब्धि है। उन्होंने अपने चिन्तन की गहराई से नए–नए भाव–रत्न निकाले हैं। इसके अतिरिक्त इतिहास–विद् लेखक ने भावुकता के द्वारा कहीं ऐतिहासिक तथ्यों की हत्या नहीं की। इस क्षेत्र में उनकी रचना इतनी सफल हुई कि किसी अन्य लेखक को लेखनी उठाने का साहस ही न हुआ। जिस प्रकार राम–काव्य और कवियों द्वारा रचित हुआ, परन्तु हिन्दी साहित्य का पाठक एक मात्र तुलसी के काव्य को ही राम–काव्य मानता है, उसी प्रकार यदि किसी अन्य लेखक ने इस विषय को छुआ भी तो उसकी ओर किसी का ध्यान ही नहीं गया। मुगलकालीन भवनों का आधार लेकरलेखक ने जिस प्रकार अपन भावुक्ता का स्त्रोत बहाया और पत्थरों के भीतर हृदय की धड़कनों का संचार कर दिया, उसकी प्रशंसा आचार्य शुक्ल से लेकर अन्य अनेक आलोचकों ने मुक्त कंठ से की है। कतिपय उक्तियाँ प्रस्तुत हैं–

(क) डॉ. रघुवीर सिंह ऐसे इतिहास के प्रकण्ड विद्वान के हृदय में ऐसा भाव सागर लहराते देखकर तृप्त हो गया। विद्वानता और भावुक्ता का ऐसा योग संसार में अन्यत्र विरल है। (रामचन्द्र शुक्ल)

(ख) उनकी शेष स्मृतियां एक अमर कृति हैं। (पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश')

(ग) भाषा और भाव दोनों ही दृष्टि से शेष–स्मृतियां गद्य साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। (शान्ति प्रिय द्विवेदी)

(घ) भाषा तथा शैली की दृष्टि से इनकी शेष–स्मृतियां हिन्दी निबंध–साहित्य की अमूल्य–कृतियों में से है।

प्रस्तुत अध्येता का विचार है कि समस्त रचनाओं के आधार पर भी यदि देखा जाये जो डॉ. रघुवीर सिंह का स्थान इस परम्परा में अत्यन्त ऊँचा है। इसका एक कारण तो यह है कि वियोगी हरि, रायकृष्ण दास औश्र चतुरसेन शास्त्री की रचनाओं में निबंध–तत्व कम है। वस्तुतः उनकी अधिकांश रचनाओं में निबधं का स्वरुप उतरता ही नहीं है वे निबन्ध के व्यक्तित्व से प्रायः शून्य ही हैं। वे तो भावोच्छवास के छोटे–छोटे पत्रक हैं। उनमें भाव–तरंगे ही अधिक हैं भावों का अश्रु–प्रवाह नहीं। डॉ. रघुवीर सिंह की 'शेषस्मृतियां' की अनेक रचनाएं, चतुर्वेदी जी की कृतियां, पूर्णसिंह के निबन्ध और शान्ति प्रिय द्विवेदी के संस्मरणात्मक प्रणाली के भावात्मक निबंध के भाव हैं और वास्तविक रुप से इस परम्परा में स्वीकृत हो सकते हैं। शान्तिप्रिय द्विवेदी की ये रचनाएं अधिक नहीं है। उनका महत्व अन्य क्षेत्रों में तो है, परन्तु इस विधा के विकास में उनका कोई विशेष यागदान नहीं है। माखनलाल चतुर्वेदी का स्थान निश्चय ही महत्वपूर्ण है। भाषा–शैली की दृष्टि से तो डॉ. पद्यसिंह शर्मा कमलेश 'शेष–स्मृतियां' को चतुर्वेदी जी की कृतियों के बाद ही स्थान देते हैं। इनमें विषय–विविधता भी है। परन्तु सतग्र रुप से देखने पर डॉ. रघुवीर सिंह का स्थान ही अधिक महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। चतुर्वेदी जी द्वारा स्वीकृत अधिकांश विषयों पर डॉ. रघुवीर सिंह से अन्य लेखकों ने भी लेखनी चलाई है औश्र पर्याप्त की है परन्तु डॉ. रघुवीर सिंह ऐतिहासिक प्रवृत्ति के एक मात्र लेखक होने के कारण विशेष महत्व के अधिकारी हो जाते हैं। पूर्णसिंह का स्थान भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उनका व्यक्तित्व गुलेरी जी जैसा है। गुलेरी जी ने जिस प्रकार तीन कहानियों के आधार पर ही अमरता प्राप्त कर ली, उसी प्रकार पूर्णसिंह जी कुछ निबन्धों के बल पर ही अमिट–स्थान बना गए। परन्तु अध्यापक पूर्णसिंह मूलत– पंजाबी के लेखक थे और हिन्दी में उन्होंने अधिक नहीं लिखा। इसके अतिरिक्त उनकी भावुकता बहुत से स्थलों पर विचारात्मकता से दब सी गई है। डॉ. जयनाथ नलिन उनके निबन्धों को मूलतः विचारात्मक ही मानते हैं।

डॉ. रघुवीर सिंह ललित निबन्ध के शिखर हैं, उन्हांने मनोवैज्ञानिक विषयोंकी दुर्गम घाटियों, अछूती चोटियों और दुर्भेद्य बीहड़ों को अपनी तलस्पर्शिनी मेधा, नवोन्मेष शालिनी प्रतिभा और अन्तर्भेदिनी प्रखरतासे ऐसा सहज–सुगम–सुबोध बना दिया है कि उनका यह श्रमसाध्य कृतित्व दुर्जेय दुर्ग पर फहराते एक मात्र ध्वज की तरह चुनौतीपूर्ण बन गया है। जैसे सूर वात्सल्य के क्षेत्र में अकेले हैं, जैसे तुलसी ले रामभक्ति क सारी संभावनाओं को निःशेष कर दिया, वैसे ह डॉ. रघुवीर सिंह ने मनोविकारों पर जबरदस्त ढ़ंग से निबन्ध लिखकर उसकी समस्त संभावनाओं को इस कदर निःशेष कर दिया कि उनके बाद किसी भी लेखक नेदस विषय पर लेखनी उठाने का साहस ही नहीं दिखाया। उनके ये निबन्ध विचारात्मक ललित निबन्धों के चरम आदर्श हैं। (डॉ. आर.के.सिंह)

विचारात्मक निबन्धों के क्षेत्र में रघुवीर सिंह जी अपने प्रतिमान आप हैं। उनके द्वारा निर्मित प्रतिमान जितने स्तरीय हैं, निबन्ध उनसे भी अधिक उच्चस्तरीय हैं, मानो प्रतिमानों और कृतित्त्व में होड़ हो। जिस प्रकार जयशंकर प्रसाद ने पारसी रंगमंचके निम्नस्तरीय नाटकों से चिढ़कर हिन्दी नाट्य–जगत को गरिमामय नाटक प्रदान किए, ठीक उसी प्रकार श्री सिंह जी ने समकालीन निबन्ध लेखक के उथले स्तर से क्षुब्ध

होकर उच्चस्तरीय निबन्ध लिखे। अतः रघुवीर सिंह की महत्ता का सम्यक् आकलन करने के लिए तत्कालीन निबन्ध परिदृश्य पर दृष्टिक्षेप करना आवश्यक है।

डॉ. रघुवीर सिंह को निबन्ध–लेखन की एक सजीव परम्परा विरासत में मिली थी। आचार्य शुक्ल का सबसे समर्थ साहित्य निबन्ध साहित्य ही है। उस युग के निबन्धकारों ने अपने जिदांदिल और दबंग व्यक्तित्व से निबन्ध–साहित्य को तेजस्विता प्रदान की थी। स्वयं आचार्य शुक्ल निबन्धकार थे। उनका अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न निबन्ध हास्य–व्यंग्य की आधारशिला कहा जा सकता है, इस युग के प्रताप नारायण मिश्र और बाणभट्ट ऐसे प्रखर, प्रतिभाशाली और तेजस्वी निबन्धकार थे कि स्वयं श्री सिंह जी ने उन्हें 'हिन्दी का एडीसन और स्टील' संज्ञा से विभूषित किया। इन दोनों ने गंभीर और हल्के दोनों प्रकार के निबन्ध लिखे।

भारतन्दु काल का निबन्ध–साहित्य अतः अपनी जिंदादिली के लिए ही पहचाना गया, गंभीरता के लिए नहीं। पत्रकारिता और समाज–सुधार से प्रेरित इन निबन्धकारों ने न तो गहनता में उतरने की आवश्यकता अनुभव की और न ही पत्रकारिता के आग्रह ने उन्हें यह अवसर प्रदान किया।

द्विवेदी युग, जिसके उज्ज्वलतम और प्रखरतम निबन्धकार हैं–स्वयं डॉ. रघुवीर सिंह उन्हें इस काल का ही नहीं समूचे हिन्दी साहित्य का शीर्षस्थ निबन्धकार कहा जाता है। वे अपने समकालीन निबन्धकारों में प्रमुख निबन्धकार थे, अध्यापक पूर्ण सिंह, रायकृष्णदास, आचार्य चतुरसेन शास्त्री, पं0 माखनलाल चतुर्वेदी, पं0 शान्तिप्रिय द्विवेदी। इन निबन्धकारों में से भारतेन्दु कालीन जिंदादिली गायब हो गई। हास्य–व्यंग्य की जगह नीतिगत गम्भीरता घर कर गई। विषयों की विविधता तो बढ़ी किन्तु विवेचन का पैनापन गायब हो गया। दृष्टि समर्थ होते हुए भी विषय की सतह पर छिटकती रही। उसके भीतर प्रवेश करने में प्रवृत्त न हो सकी। इसी अभाव पर अफसोस प्रकट करते हुए महाराज रघुवीर सिंह ने कहा–''खेद है कि समास शैली पर ऐसे विचारात्मक निबन्ध लिखने वाले, जिनमें बहुत ही चुस्त भाषा के भीतर एक पूरी अर्थ परम्परा कसी हो, अधिक लेख हमें मिले।'' ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि इसी अभाव की पूर्ति के लिए वे स्वयं निबन्ध के मैदान में उतरे। उन्हें अफसोस था कि हिन्दी साहित्य की उच्च कक्षाओं में पढ़ाई जाने वाली निबन्ध–सामग्री का प्रायः अभाव था। इसी क्षोभ से उनके प्रतिमान निकले। उन्होंने निबन्ध को 'अर्थ–प्रसूत विधा' कहा जिसमें विचारों की गूढ़–मुम्फित परम्परा को जो अर्थ की गतिशीलता, के कारण 'पाठक' की वृद्धि को नई–नई विचार पद्धति पर उत्तेजित कर दे। उन्होंने स्पष्ट कहा–शुद्ध विचारात्मक निबन्धों का चरम उत्कर्ष वहीं कहा जा सकता है जहां एक–एक पैराग्राफ में विचार दबा–दबाकर कसे गये हों और एक–एक वाक्य किसी सम्बद्ध विचारखण्ड को लिए हों।

उपर्युक्त प्रतिमानों से यह स्पष्ट है कि शुक्ल जी अपने समकालीन निबन्ध– लेखन से असंतुष्ट थे। उनकी यह असंतुष्टि विशेषकर विचारात्मक निबन्धों को लेकर थी ध्यातव्य है कि उनकी इस आलोचना में अपने समकालीनों या अंग्रेजों के प्रति अवज्ञा भाव नहीं था। उन्होंने एक–एक निबन्धकार की खूबी को रेखांकित किया था। उन्होंने बालमुकुन्द गुप्त की चुलबुली, विनोदपूर्ण और सजीव निबन्ध शैली को यथोचित सम्मान दिया, चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' और अध्यापक पूर्ण सिंह के निबन्धों में सहज–सुलभ शैलीगत, विशिष्टता, अर्थगर्भिता वक्रता तथा नूतन भाव–भंगिमा को उनकी अनूठी उपलब्धि कहा, फिर भी कहना होगा कि कुल मिलाकर इस युग के निबन्धकार ध्यानाकर्षक निबन्ध नहीं लिख रहे थे।

मनोवैज्ञानिक निबन्धों की परम्परा इस युग में भी गतिमान थी। स्वयं द्विवेदी जी ने, 'क्रोध और लोभ' निबन्ध लिखे। परन्तु उनमें गहराई न के बराबर थी। वे विषय के भीतर न बैठ सके। इसलिए इन मनोविकारों पर या तो काव्यात्मक टिप्पणियाँ करते रहे, या उन्हें अकथ्य कहकर अपनी असमर्थता का परिचय देते रहे, जहाँ द्विवेदी जी अपने स्थान पर ही कदम ताल कर रहे हैं, वहीं डॉ0 रघुवीर सिंह जी विषय के भीतर दो डग भर लेते हैं। विषय खुल पड़ता है, जिज्ञासा आतुर हो उठती है, यही है डॉ0 रघुवीर जी की मौलिकता और उपलब्धि।

समकालीनों तथा पूर्ववर्ती निबन्धकारों की तुलना में जब डॉ. रघुवीर सिंह के निबन्धों का अध्ययन करते हैं तो मुग्ध रह जाना पड़ता है। उन्होंने न केवल भावात्मक निबन्धों की परम्परा को गतिशील और समृद्ध किया अपितु उसे उत्कर्ष प्रदान किया। निबन्ध की ऐसी कोई शैली नहीं जिसके प्रयोग में वे चूके हों। सारगर्भित और मितकथन के तो वे पर्याय बन गए। उन्होंने न केवल भाषा और शैली को समृद्धि प्रदान की, अपितु मनोविज्ञान और काव्यशास्त्र को भी नए आयाम दिये। उन्होंने मनोविज्ञान को नई दृष्टि दी, उसको विस्तार दिया, उसे लोकमंगल का परिप्रेक्ष्य प्रदान किया। 'ताज' और 'फ्रांस की क्रान्ति' के माध्यम से उन्होंने हिन्दी आलोचना की नींव रखी। आलोचना भाषा का निर्माण किया। आधुनिक कवित्व के नये प्रतिमान खोजे। सर्वत्र उनकी मौलिकता की छाप दिखाई देती है। इसलिए न केवल भावात्मक निबन्धों के क्षेत्र में बल्कि आलोचना और साहित्येतिहास के क्षेत्र में वे शीर्ष पर बने हुए हैं। उनकी महिला का बखान करते हुए आचार्य डॉ. प्रकाश द्विवेदी कहते हैं कि – भारतीय काव्यालोचन–शास्त्र का इतना गम्भीर और स्वतंत्र विचारक हिन्दी में तो दूसरा हुआ ही नहीं, अन्यान्य भारतीय भाषाओं में हुआ या नहीं, ठीक से नहीं कह सकते। शायद नहीं हुआ !

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि ललित निबन्धों की परम्परा में डॉ. रघुवीर सिंह जी का स्थान और महत्व अनुपम और विशिष्ट है।

इस प्रकार ललित निबन्ध विधा के संदर्भ में हम यह कह सकते हैं कि इस विधा की साहित्यिक नदी का पाट भले ही अन्य साहित्यिक विधाओं की तरह चौड़ा न हो किन्तु इसमें भावों की तरलता एवं अनुलनीय गहराई है तो कि प्रत्येक पाठक को रसाप्लावित कर देती है और नदी के शिल्प में बीच–बीच में निकले एवं बहते हुए अनगढ़ पत्थर और उसकी उत्ताल तरंगों उसकी खूबसूरती और बढ़ा देते हैं।

ललित निबन्धकारों की परम्परा में वियोगी हरि, कुबेर नाथ राय, हजारी प्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र, रामवृक्ष बेनीपुरी, विवेकी राय, निर्मल वर्मा आदि अनेक साहित्यकारों ने इस विधा को अपने–अपने ढंग से नई ऊँवाइयाँ प्रदान की हैं किन्तु डॉ0 रघुवीर सिंह का जब भी कभी ललित निबन्धकार के रूप में मूल्यांकन किया जायेगा वे अपने क्षेत्र में अकेले और अनूठे साहित्यकार हैं। उनके लगभग सभी ललित निबन्धों की आधार सामग्री इतिहास एवं अध्यात्म से ली गई है। जहाँ तक ऐतिहासिक ललित निबन्धों का प्रश्न है उन्होंने अपने निबन्धों में तत्कालीन इतिहास को अतीत, के साथ वर्तमान का अद्भुत सम्मिश्रण करते हुए विचित्र ताना–बाना बुना है जो पाठक को प्रतिपल रोमांचित कर देता है वहीं आत्यात्मिक ललित निबन्धों में अपने माध्यम से व्यक्ति एवं तत्कालीन समाज की मनोदशा को बखूबी रेखांकित किया है जो कि श्लाघनीय है। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि ऐतिहासिक ललित निबन्धकारों की श्रेणी में अभी तक डॉ0 रघुवीर सिंह एकमात्र ललित निबन्धकार हैं।

संदर्भ

- ✓ ललित निबन्ध और डॉ0 रघुवीर सिंह – डॉ. अखिलेश निगम 'अखिल', पृ. 91
- ✓ हिंदी ललित निबन्ध–डॉ. प्रकाश द्विवेदी, पृ. 85
- ✓ ललित निबन्ध और डॉ. रघुवीर सिंह– डॉ. अखिलेश निगम 'अखिल', पृ. 65
- ✓ ललित निबन्ध का उद्‌भव और विकास–डॉ. आर.पी. वर्मा, पृ. 65
- ✓ हिंदी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. 95
- ✓ हिंदी साहित्य की वस्तुपरख इतिहास–डॉ. राम प्रसाद मिश्र, पृ. 82

Copyright © 2015, Dr. R.P.Verma. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.